P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-8* Novembe 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

नेहरू चिंतन की दिशा और समकालीन नाटक

राज भारद्वाज
एसोसिएट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
भगिनी निवेदिता कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली

सारांश

भारत के संदर्भ में ब्रिटिश हुकूमत से आजादी प्राप्त करने हेतु हुए आन्दोलन के जवाहर लाल नेहरू अगुवा राजनेता थे। नेहरू के बहुआयामी व्यक्तित्व ने प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में नए युग का सूत्रपात किया। भारत को सपनों के नए पंख लगाए। नेहरू एक आकर्षक व्यक्तित्व के बेहद लोकप्रिय नेता थे, जिन्हें साहित्य, संस्कृति और इतिहास की भी अच्छी जानकारी थी। उनकी शिक्षा पश्चिमी पद्धति से ब्रिटेन में हुई थी, इसलिए उनके व्यक्तित्व में पश्चिमी ढंग का विशिष्ट खुलापन भी था। उनके चिंतन पर आधारित 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' (भारत एक खोज) एक बहुत प्रसिद्ध सीरियल रहा, जिसने आज की पीढ़ी को नेहरू चिंतन से रूबरू करवाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। 1947 में मिली आजादी के आसपास का दौर विश्व स्तर पर साम्यवादी/समाजवादी विचार आन्दोलन के उत्तरोत्तर प्रभावशाली होने का दौर था। नेहरू भी सोवियत संघ से उठे साम्यवादी और भारतीय समाजवादी विचार आन्दोलनों से खासे प्रभावित थे। उन्होंने गाँधी चिंतन के गाँव की आत्मनिर्भरता वाले रास्ते की अपेक्षा टेक्नोलॉजी और कारखानों के माध्यम से भारत के विकास के बड़े सपने देखे थे। प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में उन सपनों को साकार करने हेतु उन्होंने अनेक महत्त्वपूर्ण कदम भी उठाए थे। इस रूप में, एक नए भारत के निर्माण में नेहरू ने साहित्य, संस्कृति, समाज और राजनीति के क्षेत्र में गहरी छाप छोड़ी है। भारत में संसदीय लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत बनाने में उनका ऐतिहासिक योगदान रहा है। लोकतंत्र के विषय में उनका दृढ़ मत था कि ''अंतिम रूप से विश्लेषण किया जाए तो यह चिंतन पद्धति है, कर्म पद्धति है और अपने पड़ोसी तथा अपने विरोधी और प्रतिद्वंद्वी के प्रति व्यवहार करने की पद्धति है।''[1]

मुख्य शब्द : नेहरू युग, भारतीय समाज, कृषि प्रधान देश।

प्रस्तावना

नेहरू युग में भारत नव–निर्माण की प्रक्रिया से गुजर रहा था। भारतीय समाज की विभिन्न समस्याओं से दो–टूक हुए बिना इन चुनौतियों से पार पाना संभव नहीं था। इसलिए नेहरू ने भारतीय समाज के सबसे बड़े वर्ग अर्थात् किसानों की समस्याओं पर विशेष ध्यान दिया। भारत परम्परागत रूप से एक कृषि प्रधान देश है। नेहरू ने किसानों की समस्याओं को अवध प्रांत में, 1920 में फैले किसान आन्दोलनों में बहुत निकट से समझा था। किसानों की निर्धनता, अज्ञानता, अंधविश्वास आदि ने उन्हें अन्दर तक झिंझोड़ दिया था। किसानों को जमींदारों के शोषण का शिकार होना पड़ता था। प्रेमचंद के गद्य साहित्य में इसके अनेक जीवंत चित्र बिखरे पड़े हैं। नेहरू ने किसानों की चुनौतियों को राष्ट्रीय संदर्भ में देखा। उनको लगता था कि किसान जीवन की विषमता–दरिद्रता के सामने राजनीतिक स्वतन्त्रता की बात अर्थहीन हो जाती है। नेहरू लिखते हैं ''मुझे उनके लिए काम करने, उनके साथ घुलने–मिलने, उनकी झोपड़ियों में रहने की विशेष सुविधा प्राप्त हुई। मैं जो लम्बे अरसे से तलवार के सिद्धांत में विश्वास करता था, किसानों द्वारा अहिंसा के सिद्धांत में आस्था रखने वाले के रूप में रूपांतरित कर दिया गया। मुझे यकीन करना पड़ा कि अहिंसा उनमें मूलबद्ध है और उनके स्वभाव का अंग है।[2] नेहरू ने किसानों को गाँधी के असहयोग आंदोलन से जोड़ने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। जमींदारी प्रथा के विरुद्ध तो उनके तीखे विचार थे। उनके अनुसार ''मेरी राय में जमींदारी की जमात बिल्कुल फालतू है। मैं जमींदारी का मतलब समझ ही नहीं पाता। जो शख्स काम करता है, उसे मेहनत का फल मिलना चाहिए, और जो शख्स गद्दी पर बैठा रहता है उसे कुछ नहीं मिलना चाहिए। अगर मेरा बस चले तो मैं ऐसा इंतजाम करूं कि कोई भी खाली न बैठा रह सके। और जो शख्स ज्यादा कड़ी मेहनत करे उसे ज्यादा मिले और जो कम काम करे उसे कम मिले। दूसरे मुल्कों की तरफ देखिए। इन जगहों के जमींदार धीरे–धीरे गायब होते जा रहे

हैं।''[3]

स्पष्टतः नेहरू के चिंतन पर समाजवाद का प्रभाव दिखायी पड़ता है। नेहरू अपने सामाजिक, सांस्कृतिक उत्थान के नजरिए को लेकर भी प्रतिबद्ध दिखायी पड़ते हैं। भारतीय समाज में स्त्री और छुआछूत की समस्या को लेकर भी उन्होंने अपने दृढ़ विचार प्रस्तुत किए हैं। महिला विद्यापीठ, इलाहाबाद के वक्तव्य में उन्होंने उद्घोष किया था कि ''भारत का भविष्य गुड़ियों और खिलौनों से नहीं बन सकता और अगर आप देश की आधी आबादी को बाकी की आधी आबादी के हाथ का महज खिलौना और दूसरों के ऊपर बोझ बनाएंगे तो आप किस तरह प्रगति कर सकेंगे? इसलिए मैं कहता हूँ कि आप इस समस्या का बहादुरी से मुकाबला कीजिए और बुराई की जड़ पर चोट कीजिए।''[4]

वस्तुतः आजादी के साथ भारत में जिन लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना की गयी उनमें स्त्रियों को वोट का अधिकार भी एक उल्लेखनीय कदम था। यह गाँधी, नेहरू, अम्बेडकर जैसे चिंतकों की दूरदृष्टि का ही परिणाम था।

सहित्यावलोकन

आजाद हिंदुस्तान के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरु ने अपनी बहुमुखी प्रतिभा से भारत के निर्माण, साहित्य, संस्कृति, समाज और राजनीति के क्षेत्र में गहरी छाप छोड़ी। उन्होंने टेक्नोलोजी और कारखानों के माध्यम से भारत के विकास के बड़े सपने देखे थे। लेकिन आजादी के 70 वर्ष बीत जाने पर भी इस देश में गरीबी, बेरोजगारी, आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, जनसंख्या वृद्धि जैसी अनेक समस्याओं से इस देश के विकास के रास्ते को अवरुद्ध कर रखा है। डॉ0 रमा ने देश की इन्हीं समस्याओं को 'शिक्षा – अर्थ, महत्व एवं उद्देश्य' में इंगित करते हुए लिखा है– ''साथ ही उन्होंने बताया है कि यदि भारत को उन्नतिशील राष्ट्रों के साथ चलना है तो वैज्ञानिक ज्ञान विकास करते हुए सामाजिक– सांस्कृतिक मान्यताओं एवं परंपराओं के दृष्टिकोण में समयानुकूल परिवर्तन करना होगा।''

नेहरु के दूरगामी निर्णयों की चर्चा बिपिन चंद्र ने अपनी पुस्तक 'आजादी के बाद का भारत (2014)' में की है। उन्होंने बताया है की नेहरु ने भारतीय अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए समाजवाद और पूँजीवाद के मेल मिश्रित आर्थिक व्यवस्था अपनाया।

अध्ययन का उद्देश्य

नेहरु के बहुआयामी व्यक्तित्व ने प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में नये युग का प्रारम्भ किया। आजादी से पूर्व जो स्वप्न भारतीय जनमानस ने देखे, प्रधानमंत्री के रूप में उन स्वप्नों को साकार करने हेतु उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण कदम भी उठाये और ऐसे दूरगामी निर्णय लिए जो भारत के नव निर्माण में भागीदार रहे। नेहरु के व्यक्तित्व की व्यापकता और देश के समाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक क्षेत्रों में उनकी सहभागिता को हिंदी नाटकों के माध्यम से व्याख्यायित करना ही इस लेख का उद्देश्य है।

धर्म, विज्ञान और साम्प्रदायिकता

जवाहर लाल नेहरू धर्म की परम्परागत रवायतों की अपेक्षा तर्कशीलता पर जोर देते थे। धार्मिक कर्मकाण्ड, रूढ़िवाद से वे किनारा करते थे। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इतिहास को कड़ियों से जोड़ना चाहते थे। उनकी दृष्टि में साहित्यकार को युग–सापेक्ष मूल्यों का प्रहरी होना चाहिए। वर्तमान युग में साहित्यकार को प्राचीन काल की तरह आश्रयदाताओं का प्रशस्तिगान ही नहीं करना चाहिए बल्कि जनता में जागृति और समयानुकूल नए भावों का संचार भी करना चाहिए। राष्ट्र निर्माण के समकालीन सन्दर्भों में डॉ. रमा आज भी इन्हीं चुनौतियों से दो–चार होने का आह्वान करती है। शिक्षा : अर्थ, महत्त्व एवं उद्देश्य में वे लिखती हैं कि ''भारतीय समाज में अभी तक वही परम्पराएँ, मान्यताएँ तथा दृष्टिकोण प्रचलित है, जिन्हें प्राचीन युग में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता था। भारत अब स्वतन्त्र है। यदि भारत को अब उन्नतिशील राष्ट्रों के साथ–साथ चलना है तो हमें भी वैज्ञानिक ज्ञान का विकास करके औद्योगिक क्षेत्र में उन्नति करते हुए अपनी सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं, मान्यताओं एवं दृष्टिकोण में समयानुकूल परिवर्तन करके देश का आधुनिकीकरण करना होगा।''[5]

नेहरू ने स्वयं भी विश्व इतिहास की झलक, हिन्दुस्तान की कहानी मेरी कहानी, जैसी पुस्तकों की रचना की। उनके चिंतन पर आधारित 'भारत एक खोज' बहुचर्चित सीरियल भी दूरदर्शन पर खासा चर्चित रहा था।

नेहरू भारतीय समाज में व्याप्त धार्मिक कट्टरता को साम्प्रदायिकता के चश्मे से देखते थे। भारत विभाजन की प्रक्रिया में जो मानवीय त्रासदी उस समय के लोगों ने झेली थी, वह दुनिया के इतिहास का काला अध्याय है। स्वतन्त्र भारत में नेहरू अल्पसंख्यकों के रहनुमा बनकर उभरते हैं। वे भारत में रह गए मुस्लिमों की रक्षा की प्रतिबद्धता दोहराते हैं। अल्पसंख्यकों के प्रति अपने विशेष दृष्टिकोण के कारण वे हिन्दी भाषा के स्तर पर 'हिन्दुस्तानी' अपनाने पर जोर देते हैं। भाषायी चिंतन के स्तर पर राष्ट्रीय सन्दर्भों में भी नेहरू राष्ट्रभाषा के विषय में गाँधी के स्पष्ट और कठोर मत के बावजूद अंग्रेजी को अपनाने के लिए उद्धृत रहते हैं।

नेहरू चिंतन के सामाजिक सन्दर्भ और चुनौतियाँ

नेहरू वैज्ञानिक तर्कवादी दृष्टिकोण से आगे बढ़ते थे। अपने चिंतन पर पड़े पश्चिमी प्रभाव के कारण उन्होंने कई बार ऐसे निर्णय भी लिए जिन्होंने भारत के भविष्य को दूर तक प्रभावित किया। गाँधी और पटेल, भारत के विकास का मार्ग गाँव से होकर गुजरते देखना चाहते थे। नेहरू औद्योगिकरण, टेक्नोलॉजी आधुनिक संसाधनों के उपयोग का मार्ग ढूँढ़ते हैं। प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में नेहरू की गाँव और किसान सम्बन्धी नीति की आज के अनेक विद्वान तीखी आलोचना करते हैं।

राजनीतिक क्षेत्र में भी 'कश्मीर' समस्या को नेहरू द्वारा संयुक्त राष्ट्र में ले जाना एक बड़ी गलती थी। कश्मीर के प्रति नेहरू का लचीला व्यवहार आज एक भयंकर अन्तर्राष्ट्रीय समस्या के रूप में उभरा है। पाकिस्तान के साथ दो युद्ध और आतंकवाद की वर्तमान समस्या के जड़ में भी कई लोग नेहरू की ढुलमुल नीति को ही मानते हैं। 1962 के भारत चीन के युद्ध के परिप्रेक्ष्य में तो राष्ट्रकवि दिनकर ने 'परशुराम की प्रतिक्षा' कविता की रचना की थी। अनेक साहित्यकार उस कविता के

संदर्भ नेहरू चिंतन में खोजते हैं।

नेहरू युग के अन्य साहित्यकारों पर भी नेहरू के विराट व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ा है। छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत ने भी 'जवाहरलाल नेहरू के प्रति' शीर्षक से एक कविता लिखी थी। डॉ. नगेन्द्र ने हिन्दी साहित्य पर नेहरू के अप्रत्यक्ष प्रभाव की ओर संकेत किया है। उनके अनुसार ''हमारे साहित्य पर उनका प्रभाव प्रत्यक्ष न होकर अप्रत्यक्ष ही था। नेहरू की श्रेष्ठ कृतियाँ अंग्रेजी में है और इसमें सन्देह नहीं कि अंग्रेजी गद्य के वे उत्तम शैलीकार थे।''[6]

वास्तव में नेहरू के चिंतन का फलक बहुत हद तक अन्तर्राष्ट्रीय था। वे विश्व स्तर पर पंचशील सिद्धान्त के प्रस्तोता थे। युद्ध की अपेक्षा शांति के अग्रदूत थे। युद्ध को आद्य पशु की वृत्ति का कारण मानते थे। स्वातन्त्र्योत्तर सन्दर्भो में वे समानता, बन्धुत्व और मानव–अधिकारों के पक्षकार थे। जगदीश चन्द्र माथुर के 'पहला राजा' नाटक पर नेहरू के व्यक्तित्व का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। नाटक की भूमिका से वे लिखते हैं कि ''हरेक नाटककार को अपने अनुभव के दायरे में से ही समस्याएँ और परिस्थितियाँ बेचैन करती हैं, और उन्हें उजागर करने के लिए वह पात्र और प्रसंग खोजता है। उन्हें ही वह मंच की परिस्थितियों में बैठाता है। यही मैंने इस नाटक में किया है।''[7]

उल्लेखनीय है कि 'पहला राजा' नाटक में प्रतीकों के दोहरे अर्थ हैं। पौराणिक पात्र राजा पृथु नेहरू के ही व्यक्तित्व की प्रतिछाया है। उन्होंने राजा होने की अभी–अभी शपथ ली है इसलिए पुरुषार्थ और परिश्रम की बात करते हैं और चाटुकारों को फटकारते है ''बंद कीजिए यह शब्दाडम्बर... अभी तो मैंने राजा होकर रत्ती भर काम नहीं किया। अभी से स्तुति कैसी?''[8] डॉ. गिरीश रस्तोगी भी यमगाथा में पुरुरवा के चरित्र की मिथकीय पुनर्व्याख्या से प्रभावित दिखायी पड़ते हैं।

राजा पृथु बांध अर्थात् नवनिर्माण का कार्य स्वयं अपने हाथों से करना चाहते हैं। रूढ़िवादी परम्परावादी मंत्रीगण इसमें बाधा पहुँचाते है। इन्द्रनाथ मदान उद्घाटित करते हैं ''इसके माध्यम से नेहरू युग की आधुनिकता या आधुनिकता का पहला दौर उजागर होने लगता है। योजनाओं का प्रारम्भ, भारत–चीन युद्ध, मंत्रियों के षड्यंत्र, घाटे का बजट, पिछड़ी जातियों की समस्याएँ, संविधान पूँजीवाद, जनता का शोषण और अन्य नेहरू युगीन समस्याओं की अनुगूँज नाटक में आरंभ से अंत तक मिलती हैं।''[9]

नेहरू के नेतृत्व में आजादी के आन्दोलन के दौरान और आजादी प्राप्त हो जाने के प्रारम्भिक वर्षो में जो सपने भारत–राष्ट्र ने देखे थे, 1960 के दशक के आते–आते उनके ऊपर धूल छाने लगी। 1962 के चीनी आक्रमण ने तो नेहरू की शान्तिप्रियता और आपात स्थिति में युद्ध लड़ने की क्षमता के सम्मुख तीखे प्रश्न खड़े कर दिए। डॉ. शिवप्रसाद सिंह ने 'घाटियाँ गूँजती है' नाटक में स्पष्ट किया कि ''प्रधानमंत्री ने आज लोकसभा में भाषण देते हुए जनता से अपील की, कि जनता धीरज से काम ले और शत्रु से देश की चप्पा–चप्पा भूमि छुड़ा लेने के लिए कमर बाँधे रहे। उन्होंने अंतिम सांस तक शत्रु का सामना करने की शपथ फिर दोहरायी।''[10]

नेहरू ने भारत में लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। लोकतंत्र में विपक्ष की भूमिका को उन्होंने अपरिहार्य माना है। वस्तुतः विपक्ष ही सरकार को निरंकुश होने से रोकता है। विपक्ष का दमन तानाशाही को जन्म देता है। दूधनाथ सिंह कृत 'यमगाथा' में पुरुरवा नेहरूयुगीन विपक्ष का प्रतिनिधि पात्र है। जन–सरोकारों को सरकार के सम्मुख रखना वो अपना धर्म समझता है। इसलिए कहता भी है कि ''हम जनता के साथ हैं, इसलिए विपक्ष है।''[11]

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नेहरू ने उस समय दो ध्रुवों में बँटे विश्व समुदाय को नयी दृष्टि प्रदान की। रूस और अमेरिका के गुटों की अपेक्षा तीसरा 'गुट निरपेक्ष' आन्दोलन खड़ा किया। उसमें पंचशील के सिद्धान्तों को विश्व समुदाय के कल्याण हेतु अनिवार्य घोषित किया। किंतु नेहरू ने निशस्त्रीकरण और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर केवल शांति की नीति का जल्दी ही खामियाजा भी भुक्ता। 1962 में भारत–चीनी भाई–भाई नारा बुरी तरह से ध्वस्त हुआ। ज्ञानदेव अग्निहोत्री ने 'नेफा की एक शाम' में नेहरू चिंतन की युद्ध के क्षेत्र में उभरी विफलता को रेखांकित किया है। उन्होंने 'वतन की आबरू' में नेहरू की धर्म की आड़ में साम्प्रदायिकता फैलाने वाले असामाजिक तत्वों का तीखा प्रतिकार करने की भावना को ही अंगीकार किया है। ''वतन की आबरू जेहाद और मजहब की झूठी नकाब लगाकर हमला करने वाले नापाक आक्रमणकारियों की काली करतूतों पर आधारित है। नाटक का राष्ट्रभक्त मुस्लिम पात्र इलाही बख्श निडरता से उद्घोषण करता है कि ''हमारी जान क्या वतन से ज्यादा कीमती है।''[12] प्रो. रमेश गौतम जयशंकर प्रसाद के 'जनमेजय का नागयज्ञ' नाटक के संदर्भ में 1924–26 के मध्य हुए साम्प्रदायिक दंगों की विवेचना करते हुए लिखते हैं – ''राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास साक्षी है कि इन दो वर्षों में 1924–26 में भारत में बहुत अधिक साम्प्रदायिक दंगे हुए। असहयोग और खिलाफत आन्दोलन के समय गाँधी के प्रयासों से दोनों सम्प्रदायों में मेल–मिलाप और परस्पर सहयोग का रूख बना था, किन्तु वह भी दीर्घजीवी न हो सका।''[13] वस्तुतः नेहरू और गाँधी जैसे नेताओं को साम्प्रदायिकता के संदर्भ में यह स्पष्ट हो गया था कि जब तक भारत की दोनों प्रमुख जातियों का राष्ट्रीय दृष्टिकोण एक–सा नहीं होगा तब तक राष्ट्रीय आकांक्षा को प्राप्त नहीं किया जा सकता। नेहरू मानते थे कि ब्रिटिश सरकार हिन्दू–मुस्लिमों की दूरी को निरंतर बढ़ाने का प्रयास करती है। कल्लन मीना भी साम्प्रदायिकता की समस्या को भारतीय समाज के सम्मुख बड़ी चुनौती के रूप में देखते है – ''साम्प्रदायिकता से देश की एकता व अखण्डता को खतरा पैदा होता है। धर्म, मजहब व साम्प्रदायिकता के नाम पर 1947 ई. में भारत का विभाजन हुआ था। साम्प्रदायिक हिंसा होने पर विभिन्न समुदायों के बीच वैमनस्य, तनाव, अविश्वास बढ़ाता है। जिससे पड़ोस के विदेशी मुल्क इसका फायदा उठाते है।''[14]

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि नेहरू ने स्वतंत्रता के आसपास भारत के क्षितिज को एक तरह से ढक लिया था। नव–निर्माण के उस दौर में उन्होंने अनेक

दूरगामी निर्णय लिए। राष्ट्र निर्माण की एक नयी और गहरी नींव डाली। दामोदर वैली का, भाखड़ा–नागल का, हीराकुंड जलप्रबंधन जैसे महत्त्वाकांक्षी निर्णय लिए। जिन्होंने राष्ट्र की संस्कृति, साहित्य, इतिहास और विकास को बहुत दूर तक प्रभावित किया। ''उन्होंने भारतीय अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए गाँधीवाद, समाजवाद तथा पूँजीवाद के मेल से 'मिश्रित आर्थिक व्यवस्था' को अपनाया।''[15] वर्तमान दौर में उनकी नीतियों की पुनर्समीक्षा की जा रही है। यह सच है कि पिछले 70–80 वर्षों की परिस्थितियों और राष्ट्रीय विमर्श में एक बहुत बड़ा बुनियादी अन्तर आया है। इसलिए नेहरू चिंतन के सम्मुख अनेक प्रश्न उठ खड़े हुए हैं, दूरदृष्टा साहित्यकार धर्मवीर भारती ने नेहरू के व्यक्तित्व के व्यापक प्रभाव को तत्कालीन राजनीतिक घटाटोप पर छा जाने की आलोचना करते हुए लिखा था कि ''मगर यह जो नया युग संचारण कर रहा था कुछ भिन्न प्रकार का था। लगने लगा कि देश में सिर्फ एक व्यक्ति है जो देश का प्रतीक है। वह इतिहास को जैसे समझता है और जैसे उलझाता है, केवल वही मूल्यवान है।''[16] स्पष्टतः नेहरू के व्यक्तित्व का प्रभाव बहुत व्यापक था, जिसने निःसन्देह भारत के नवनिर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

संदर्भ सूची

1. *भारतीय राष्ट्रवाद, कुछ निबंध, विपिन चन्द्र 1996, जवाहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली–16, पृ. 100.*
2. *जवाहरलाल एक जीवनी, सर्वेपल्ली गोपाल 2012, साहित्य अकादमी, पृ. 50.*
3. *जवाहर वाङ्मय खंड–5, 2014, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, पृ. 25.*
4. *नेहरू वक्तव्य, महिला विद्यापीठ, इलाहाबाद।*
5. *शिक्षा : अर्थ, महत्व एवं उद्देश्य, डॉ. रमा 2017, पृ. 32.*
6. *डॉ. नगेन्द्र ग्रंथावली, खंड सात, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृ. 350.*
7. *पहला राजा, जगदीश चन्द माथुर 2013, राजकमल प्रकाशन।*
8. *पहला राजा, जगदीश चन्द माथुर 2013, राजकमल प्रकाशन।*
9. *बीसवीं शताब्दी का हिन्दी नाटक और रंगमंच, गिरीश रस्तोगी–2015, साहित्य ज्ञानपीठ।*
10. *घाटियाँ गूँजती हैं, शिवप्रसाद सिंह।*
11. *यमगाथा, दूधनाथ सिंह, 1995, लोकभारती प्रकाशन।*
12. *नेफा की एक शाम, ज्ञानदेव अग्निहोत्री।*
13. *नाटककार प्रसाद तब और अब, डॉ. रमेश गौतम 2017, पृ. 960.*
14. *रिमार्किंग एन एनलाइजेशन, वॉल्यूम–3, अंक–4, जुलाई 2018.*
15. *बीसवीं शताब्दी का हिन्दी नाटक और रंगमंच, गिरीश रस्तोगी 2015, भारतीय ज्ञानपीठ।*
16. *पश्यन्ती, धर्मवीर भारती 1972, भारतीय ज्ञानपीठ।*

पत्रिका

17. *अंतिम जन–2016.*
18. *आजकल, अप्रैल, 2017.*
19. *कादम्बरी, अप्रैल, 2017.*